

अध्याय 2: सांख्ययोग

आत्मज्ञान, निष्काम कर्म और स्थितप्रज्ञ की संपूर्ण व्याख्या | कुल श्लोक: 72

श्रीमद्भगवद्गीता का दूसरा अध्याय 'सांख्ययोग' (Sankhya Yoga) पूरे ग्रंथ का दार्शनिक आधारस्तंभ है। यदि श्रीमद्भगवद्गीता को एक भव्य महल माना जाए, तो दूसरा अध्याय उसकी नींव है। प्रथम अध्याय में केवल मनुष्य के भ्रम, अश्रुपात, अवसाद और तर्कों का चित्रण था; परंतु दूसरे अध्याय के 11वें श्लोक से जगद्गुरु भगवान श्रीकृष्ण का उपदेश आरंभ होता है। यहाँ से सामान्य सांसारिक संशय सीधे शाश्वत आत्मविद्या (ब्रह्मज्ञान) में रूपांतरित हो जाते हैं।

सांख्ययोग का नामकरण: 'सांख्य' शब्द का अर्थ है सम्यक ज्ञान या विवेक—सत्य और असत्य, नित्य और अनित्य, शरीर और आत्मा का स्पष्ट विश्लेषण। इस अध्याय में ज्ञान (सांख्य) और कर्म (योग) दोनों का समन्वय प्रस्तुत किया गया है।

1. श्रीकृष्ण की प्रथम चेतावनी: हृदय-दुर्बलता का त्याग

अध्याय के आरंभ में जब अर्जुन विषादग्रस्त होकर आंसू बहा रहे थे, तब श्रीकृष्ण ने सहानुभूति जताने के बजाय उन्हें झकझोरने वाला संबोधन दिया। भगवान जानते थे कि झूठी सांत्वना देने से भ्रम और गहरा हो जाता है। उन्होंने अर्जुन के तथाकथित 'संन्यास' और 'अहिंसा' को कायरता घोषित कर दिया:

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥२.३॥

सरल अर्थ: हे पार्थ! इस नपुंसकता (कायरता) को प्राप्त मत हो, यह तुम्हारे योग्य नहीं है। हे परंतप! हृदय की इस तुच्छ दुर्बलता को त्यागकर युद्ध के लिए खड़े हो जाओ।

यह श्लोक आज के हर निराश युवा के लिए भी एक उद्घोष है। जब भी हम जिम्मेदारियों से भागते हैं, तो हमारा मन दया, अहिंसा या थकान जैसे पवित्र दिखने वाले बहानों की आड़ लेता है। श्रीकृष्ण स्पष्ट करते हैं कि अपने निर्धारित कर्तव्य से मुंह मोड़ना कोई संन्यास नहीं, बल्कि हृदय की कायरता है।

2. 'शिष्यस्तेऽहं' - सखा से गुरु का संबंध

श्रीकृष्ण के कटु वचनों ने अर्जुन के झूठे तर्कों को तोड़ दिया। अर्जुन समझ गए कि वे जिस मानसिक स्थिति में हैं, उससे बाहर निकलने का रास्ता उनकी अपनी सीमित बुद्धि में नहीं है। श्लोक 2.7 में अर्जुन का रूपांतरण होता है:

**कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥२.७॥**

सरल अर्थ: कायरता के दोष से मेरा स्वभाव नष्ट हो गया है और कर्तव्य के विषय में मेरा चित्त भ्रमित हो गया है। इसलिए मैं आपसे पूछता हूँ कि जो मेरे लिए निश्चित रूप से कल्याणकारी हो, वह मुझे बताइए। मैं आपका शिष्य हूँ, आपकी शरण में हूँ, मुझे शिक्षा दीजिए।

जब तक हम सर्वज्ञानी बनकर बैठे रहते हैं, ज्ञान के द्वार बंद रहते हैं। जैसे ही अर्जुन ने "शिष्यस्तेऽहं शाधि मां" (मैं आपका शिष्य हूँ, मुझे सिखाइए) कहा, श्रीकृष्ण का सारथि रूप पीछे हट गया और विश्वगुरु का स्वरूप प्रकट हो गया।

3. सांख्य दर्शन: आत्मा की अमरता और देह का यथार्थ

श्रीकृष्ण सबसे पहले अर्जुन के मृत्यु के भय को समाप्त करते हैं। वे समझाते हैं कि तुम उनके लिए शोक कर रहे हो जो शोक करने योग्य ही नहीं हैं। पंडित (ज्ञानी) कभी जीवित या मृत किसी के लिए शोक नहीं करते:

**वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥२.२२॥**

सरल अर्थ: जैसे मनुष्य पुराने फटे हुए वस्त्रों को उतारकर नए वस्त्र धारण करता है, ठीक उसी प्रकार यह आत्मा पुराने जीर्ण शरीर को त्यागकर नया भौतिक शरीर ग्रहण करती है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने आत्मा के सनातन स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए कई अकाट्य तथ्य रखे (श्लोक 2.23-2.25):

- **अच्छेद्योऽयम्:** आत्मा को किसी भी अस्त्र-शस्त्र से काटा नहीं जा सकता।
- **अदाह्योऽयम्:** इसे प्रचंड अग्नि भी जलाकर भस्म नहीं कर सकती।
- **अवलेद्योऽयम्:** जल इसे भिगो या गला नहीं सकता।
- **अशोष्योऽयम्:** वायु इसके चैतन्य को सुखा नहीं सकती।
- **नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः:** यह नित्य, सर्वव्यापी, स्थिर, अचल और अनादि काल से सनातन है।

यदि जन्म और मृत्यु केवल एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाना है, जैसे बचपन से जवानी और जवानी से बुढ़ापा, तो फिर मृत्यु के लिए यह रोना और कर्तव्य से भागना सर्वथा व्यर्थ है।

4. स्वधर्म और सांसारिक दृष्टिकोण

आध्यात्मिक ज्ञान देने के बाद श्रीकृष्ण अर्जुन को व्यावहारिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भी समझाते हैं (श्लोक 2.31 से 2.38):

- **क्षत्रिय का धर्म:** एक सैनिक या प्रशासक के लिए धर्मयुद्ध से बढ़कर कोई कल्याणकारी मार्ग नहीं है।
- **अपकीर्ति का भय:** यदि तुम रणभूमि छोड़कर भागोगे, तो दुनिया तुम्हें दयालु नहीं, बल्कि कायर समझेगी। कर्ण और दुर्योधन जैसे महारथी कहेंगे कि अर्जुन भय के कारण मैदान छोड़कर भाग गया। एक सम्मानित व्यक्ति के लिए अपयश मृत्यु से भी बदतर होता है।
- **दोनों परिस्थितियों में लाभ:** यदि तुम युद्ध में वीरगति को प्राप्त होते हो, तो स्वर्ग का सुख मिलेगा; और यदि विजयी होते हो, तो पृथ्वी के अखंड राज्य का उपभोग करोगे। इसलिए दोनों ही रूपों में तुम्हारा कल्याण है।

5. बुद्धियोग और निष्काम कर्म: गीता का महामंत्र

सांख्य के बाद श्रीकृष्ण व्यावहारिक दर्शन यानी 'कर्मयोग' का सूत्रपात करते हैं। वे कहते हैं कि सामान्य मनुष्य हमेशा परिणामों के लालच में काम करता है, जिसके कारण वह तनाव, असफलता के डर और चिंता से घिर जाता है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥२.४७॥

सरल अर्थ: तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, उसके फलों में कभी नहीं। इसलिए तुम कर्मफल की वासना वाले मत बनो और तुम्हारी आसक्ति अकर्म (कर्म न करने) में भी कभी न हो।

इसी श्लोक के आगे श्रीकृष्ण योग की दो सार्वभौमिक परिभाषाएं देते हैं:

- समत्वं योग उच्यते (श्लोक 2.48):** सफलता और असफलता, जय और पराजय, सुख और दुःख में मन की समता बनाए रखना ही 'योग' है।
- योगः कर्मसु कौशलम् (श्लोक 2.50):** कुशलतापूर्वक, बिना आसक्ति के और पूर्ण एकाग्रता के साथ अपने कर्तव्य का निर्वहन करना ही सच्चा 'योग' है।

6. स्थितप्रज्ञ के लक्षण: शांत चित्त का मनोविज्ञान

अध्याय 2 के 54वें श्लोक में अर्जुन एक क्रांतिकारी प्रश्न पूछते हैं: "स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव..." अर्थात् हे कृष्ण! जिस व्यक्ति की बुद्धि स्थिर हो चुकी है, उसके क्या लक्षण हैं? वह सांसारिक परिस्थितियों में कैसे रहता है? श्रीकृष्ण इसके उत्तर में मानसिक शांति की पूर्ण वैज्ञानिक रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं:

लक्षण	स्थितप्रज्ञ पुरुष की स्थिति	आधुनिक मनोवैज्ञानिक महत्व
आत्मतृप्ति	जो अपनी समस्त सांसारिक कामनाओं का त्याग कर अपनी ही आत्मा में संतुष्ट रहता है।	बाहरी वेलिडेशन (दूसरों की प्रशंसा) पर निर्भर न रहना।
सुख-दुःख में समता	दुःखों की प्राप्ति पर उद्वेगरहित और सुखों में लिप्त न होने वाला (वीतरागभयक्रोधः)।	तनाव, एंग्जाइटी और डिप्रेशन से पूर्ण सुरक्षा।
इंद्रिय संयम	जैसे कछुआ अपने अंगों को समेट लेता है, वैसे ही इंद्रियों को विषयों से खींच लेना।	डिजिटल और मानसिक भटकाव पर नियंत्रण (Self-Control)।
शांत सागर जैसी अवस्था	जैसे नदियों के जल से सागर कभी विचलित नहीं होता, वैसे ही कामनाएं उसे डिगा नहीं पातीं।	आंतरिक स्थिरता और अपरिमित मानसिक शांति।

7. विनाश की सीढ़ी (The Ladder of Fall): पतन का चक्र

श्रीकृष्ण श्लोक 2.62 और 2.63 में समझाते हैं कि कैसे एक अत्यंत बुद्धिमान व्यक्ति भी एक छोटे-से भटकाव के कारण अपना सर्वनाश कर बैठता है:

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥२.६२॥
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥२.६३॥

सरल अर्थ: विषयों का निरंतर चिंतन करने से उनमें आसक्ति (अटैचमेंट) होती है; आसक्ति से कामना (इच्छा) पैदा होती है; कामना पूरी न होने से क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध से सम्मोह (अविवेक) पैदा होता है; सम्मोह से स्मृति भ्रमित होती है; स्मृति भ्रम से बुद्धि का नाश हो जाता है और बुद्धि का नाश होते ही मनुष्य का पूर्ण पतन हो जाता है।

8. आधुनिक जीवन और युवाओं के लिए व्यावहारिक शिक्षा

- **प्रोक्रास्टिनेशन और ओवरथिंकिंग का अंत:** जब हम 'क्या होगा' की चिंता छोड़कर 'अभी क्या करना है' पर आ जाते हैं, तो कार्यक्षमता दस गुना बढ़ जाती है।
- **आंतरिक स्थिरता (Resilience):** बाहरी परिस्थितियां कभी हमारे अनुकूल नहीं होंगी, लेकिन हमारा आंतरिक संतुलन सदैव हमारे हाथ में है।
- **आत्म-संयम:** सोशल मीडिया और आधुनिक युग के भटकावों के बीच इंद्रियों पर नियंत्रण रखना ही सफलता की पहली शर्त है।

॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे । हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

Website: soniapanghal.com